पं.क्र. (04/21/05/207665/19)

अन्तरा शब्दशक्ति
प्रकाशन एवं बहुउद्देशीय संस्था
www.antrashabdshakti.com

शब्द
से संवेदना तक...
लेखन से
परिवर्तन तक...

हिन्दी
हमारी पहचान
हमारी शक्ति

'समसामयिक प्रश्नों पर आपकी कलम'

(लेख प्रतियोगिता)

विचार...
चिंतन...
संवाद...
और
एक बेहतर
कल की ओर...

रचनाकार :-
स्मिता ठाकुर

आयोजक:-
अन्तरा शब्दशक्ति प्रकाशन
वारासिवनी (म.प्र.)

पं.क्र. (04/21/05/207665/19)

अन्तरा
शब्दशक्ति
प्रकाशन एवं बहुददेशीय संस्था
www.antrashabdshakti.com

कलम की शक्ति, समाज की दिशा

हिन्दी
हमारी पहचान
हमारी शक्ति

शब्द से संवेदन तक...
लेखन से परिवर्तन तक...

Antrashabdshaktiprakashan

संपादक : डॉ. प्रीति समकित सुराना
तकनीकी संपादक : Webcoodee.com
मुख्य कार्यालय : 15 नेहरू चौक, वारासिवनी, जिला बालाघाट (म.प्र.) 481331

संपर्क : 9009423393
ईमेल : antrashabdshakti@gmail.com
वेबसाइट : www.antrashabdshakti.com

वैधानिक सूचना

पुस्तक में प्रकाशित सभी रचनाएँ संबंधित रचनाकारों की मौलिक अभिव्यक्तियाँ हैं। प्रत्येक रचना में व्यक्त विचार, कथ्य एवं अभिमत के लिए संबंधित रचनाकार स्वयं उतरदायी हैं। रचनाओं के चयन एवं प्रकाशन का उद्देश्य साहित्यिक अभिव्यक्ति को मंच प्रदान करना एवं हिन्दी लेखन को प्रोत्साहित करना हैं।

हिन्दी
से ही है
पहचान...

विचार...
संवाद...
समाज...
और एक बैहतर कल...

पं.क्र. (04/21/05/207665/19)
अन्तरा शब्दशक्ति
www.antrashabdshakti.com
प्रकाशन एवं बहुद्देशीय संस्था

लेख प्रतियोगिता

लेखक/लेखिका - स्मिता ठाकुर

प्रायश्चित का प्रपंच और छल की छांव

प्रायश्चित का प्रपंच और छल की छांव

संसार में सबसे निर्मम दृश्य वह नहीं होता जब कोई शत्रु आपकी छाती में खंजर उतार दे; शत्रु का काम ही वार करना है और उससे बचाव की तैयारी आपकी चेतना का स्वाभाविक हिस्सा होती है। जीवन का सबसे वीभत्स, क्रूर और आत्मा को झकझोर देने वाला दृश्य वह होता है, जब वही हाथ आपके सीने में छुरा घोंपे जिसे आपने जीवन भर थामने की कसमें खाई थीं। विश्वास किसी भी मानवीय रिश्ते की वह अदृश्य, महीन और पारदर्शी सांस होती है, जिस पर दो जिंदगियों का समूचा अस्तित्व टिका होता है। किंतु जब इसी विश्वास की वेदी पर बार-बार छल, कपट और झूठ की आहुतियाँ दी जाने लगें, तो वह रिश्ता प्रेम का तीर्थ नहीं रहता, बल्कि एक जीवित यातनागृह में तब्दील हो जाता है।

वर्तमान युग में यदि कोई मुझसे पूछे कि सबसे विकराल, भयावह और रूह को सुखा देने वाली समस्या क्या है, तो मैं किसी वैश्विक मंदी, युद्ध या महामारी का नाम नहीं लूँगा। मेरी दृष्टि में सबसे विकराल समस्या है—किसी ऐसे मनुष्य के साथ एक ही चारदीवारी के भीतर सांस लेने को विवश होना, जिसके रोम-रोम में छल रचा-बसा हो, जिसने आपके आत्मसम्मान को बार-बार पैरों तले रौंदा हो, और जो अब 'सुधरने' का पवित्र चोला ओढ़कर आपके सामने प्रायश्चित का स्वांग रच रहा हो।

यह केवल एक पारिवारिक या वैयक्तिक असहजता नहीं है, यह जीवित रहते हुए अपनी ही तेरहवीं का भोज खाने जैसा है। यह एक ऐसा धीमा विष है जो न तो एक झटके में प्राण लेता है और न ही चैन से जीने देता है। यह स्थिति मनुष्य को भीतर से इस तरह खोखला कर देती है कि वह अपने ही साए से डरने लगता है।

धोखा जब पहली बार मिलता है, तो मन उसे 'भूल' कहकर बहला लेता है। मनुष्य की सहज करुणा और रिश्तों को बचाए रखने की व्याकुलता उसे यह विश्वास दिलाने पर विवश करती है कि शायद कोई विवशता रही होगी, शायद परिस्थितियाँ विपरीत रही होंगी। परंतु जब छल एक बार की दुर्घटना न रहकर एक सुनियोजित आदत, एक दैनिक दिनचर्या और चरित्र की स्थायी मुद्रा बन जाए, तब क्या?

बार-बार छले जाने का अनुभव किसी दुःस्वप्न के अंतहीन लूप जैसा होता है। हर बार एक नया झूठ पकड़ा जाता है, हर बार पकड़े जाने पर घड़ियाली आंसुओं की गंगा बहाई जाती है, हर बार पैरों में गिरकर अंतिम क्षमा की भीख माँगी जाती है, और हर बार कुछ ही दिनों बाद पीठ पर एक और वार कर दिया जाता है ये कहकर की ये गलती धीरे -धीरे आदत बन गयी थी तो इसे छोड़ने में समय तो लगेगा। यह क्रम इतनी बार दोहराया जा चुका होता है कि अब 'माफी' शब्द से ही घिन आने लगती है।

छल करने वाले की मानसिकता का सबसे घिनौना पहलू यह होता है कि वह आपकी सहनशीलता और सज्जनता को आपकी दुर्बलता मान बैठता है। उसे भली-भाँति ज्ञात होता है कि आप मर्यादाओं, पारिवारिक बंधनों और संकोच की जिन बेड़ियों में जकड़े हैं, वे आपको तुरंत पलटवार करने से रोकती हैं। इसलिए उसका हर विश्वासघात पहले वाले से अधिक धूर्त, अधिक गहरा और अधिक अपमानजनक होता है। वह आपके आंसुओं की बोली लगाता है, आपके टूटे हुए स्वाभिमान के टुकड़ों पर अपने अहंकार का महल खड़ा करता है और जब उसका हर दांव बेनकाब हो जाता है, तब वह अपने तरकश से अपना सबसे घातक तीर निकालता है—"सुधरने का ढोंग।"

जीवन का सबसे तीखा व्यंग्य यही है कि जिसने वर्षों तक आपके विश्वास को नोच-नोच कर खाया हो, वही अचानक एक दिन महात्मा बुद्ध या किसी सिद्ध संत की भाव-भंगिमा धारण कर ले। अब वह सुबह समय पर उठता है, आवाज में चाशनी घोलकर बात करता है, हर कदम फूंक-फूंक कर रखता है और अपनी हर छोटी-बड़ी गतिविधि का प्रमाण पत्र खुद ही प्रस्तुत करने लगता है।

दुनिया कहेगी, "देखो, इंसान बदल रहा है! उसे अपनी गलती का अहसास हो गया है, अब तुम्हें भी दिल बड़ा करके उसे अपना लेना चाहिए।" पर दुनिया यह कभी नहीं समझ सकती कि जिस मन ने वर्षों तक केवल ज़हर पिया हो, वह अमृत के कटोरे को भी तेज़ाब का नया प्याला ही समझता है।

जब वह देर रात तक फोन स्क्रीन को छिपाने के बजाय खुला छोड़ देता है, तो मन कहता है कि ज़रूर उसने अब चोरी के नए और अभेद्य डिजिटल रास्ते खोज लिए होंगे। जब वह बेवजह तारीफ़ करता है या अनावश्यक चिंता जताता है, तो कानों में सीटियाँ बजने लगती हैं कि यह चिकनी-चुपड़ी बातें किस भयानक सच पर पर्दा डालने के लिए बोली जा रही हैं।

यह स्थिति किसी सजा से कम नहीं है जहाँ अच्छा आचरण भी आपको सांत्वना देने के बजाय एक तीव्र मानसिक दहशत में धकेल देता है। उसकी हर सामान्य गतिविधि में अब केवल चीटिंग और षड्यंत्र की बू आती है। जब मनुष्य का मूल स्वरूप ही फरेब हो, तो उसकी सच्चाई भी किसी नए प्रपंच का पूर्वाभ्यास प्रतीत होती है। भेड़िए ने यदि अपनी खाल उतारकर मेमने का ऊन ओढ़ भी लिया हो, तो भी उसके पंजों की आहट से जंगल सहम ही जाता है। यह सुधार कोई पश्चाताप नहीं, बल्कि पीड़ित को लगातार मानसिक भ्रम में रखने का एक और परिष्कृत अत्याचार है।

इस समूची त्रासदी का सबसे त्रासद पहलू यह है कि छल करने वाले से ज्यादा मानसिक पीड़ा और आत्मग्लानि का शिकार वह व्यक्ति होता है जिसके साथ छल हुआ है। जब आप किसी के हर शब्द, हर सांस और हर गतिविधि पर शक करने के लिए विवश हो जाते हैं, तो आप धीरे-धीरे अपने ही विवेक के हत्यारे बन जाते हैं।

मन 24 घंटे एक गुप्तचर की भाँति काम करने लगता है—

- उसकी आंखों की पुतलियों का हिलना,
- उसके फोन उठाने की गति,
- उसके चेहरे पर आई क्षणिक मुस्कान,
- उसकी बातों में आए हल्के से ठहराव—

सब कुछ एक अपराध स्थल की तरह जाँचा जाने लगता है। और इस निरंतर जांच-पड़ताल से जो घृणा पैदा होती है, वह सामने वाले से ज्यादा खुद से होने लगती है। मन चीखता है कि "मैं क्या बन गया /गयी हूँ?
मैं कब से इतना शक्की, इतना बेचैन और इतना कटु हो गया/गयी?"
और यहाँ छल करने वाला एक अत्यंत कुटिल मानसिक चाल चलता है। वह अत्यंत मासूम चेहरा बनाकर कहता है, "देखो, मैं तो अब सुधरने का पूरा प्रयास कर रहा हूँ, लेकिन तुम्हारी तो फितरत ही शक करने की बन चुकी है। अब कमी मुझमें नहीं, तुम्हारे सोचने के नज़रिए में है।"

क्या गजब का व्यंग्य है! जिसने विश्वास का गला घोंटा, वह अब विश्वास न करने का दोष भी पीड़ित के ही माथे मढ़ रहा है! यह वह बिंदु होता है जहाँ पीड़ित अपने ही अस्तित्व से कटने लगता है। वह एक ऐसी अंधेरी सुरंग में फंसा दिया जाता है जहाँ सामने खाई है और पीछे आग। यदि वह शक करता है तो समाज उसे संकीर्ण और क्षमाहीन कहता है; और यदि वह पुनः विश्वास करता है, तो भीतर बैठा स्वाभिमान उस पर थूकता है कि तुम कितनी बार एक ही गड्ढे में गिरोगे?

यह व्यक्तिगत नरक कभी एक कमरे तक सीमित नहीं रहता। एक विषाक्त संबंध पूरे घर के वातावरण को एक अदृश्य, घुटन भरे गैस चैंबर में तब्दील कर देता है। घर की दीवारों में जैसे ईंट-गारे के स्थान पर अनकही चीखें और दबे हुए आंसुओं का गारा भर दिया गया हो।

परिवार के अन्य सदस्य—चाहे वे माता-पिता हों, भाई-बहन हों या निर्दोष बच्चे—इस अदृश्य युद्ध के सबसे मूक और असहाय शिकार बनते हैं। बच्चों के कोमल मानस पर यह स्थिति एक अमिट, रिसता हुआ घाव छोड़ जाती है। बच्चे शब्दों से ज्यादा माहौल की तरंगों को पकड़ते हैं। वे उस घर में बड़े होते हैं जहाँ प्रेम एक ढोंग है, जहाँ स्पर्श में कोई गर्माहट नहीं और जहाँ हर दरवाज़े के बंद होने पर किसी साजिश की आशंका रहती है। वे विश्वास करना सीख ही नहीं पाते; वे दुनिया में कदम रखने से पहले ही यह मान बैठते हैं कि मनुष्य का मूल स्वभाव ही झूठ और छल है। इस प्रकार, एक व्यक्ति का बार-बार किया गया फरेब केवल एक रिश्ते को नहीं मारता, वह आने वाली पीढ़ियों के विश्वास की रीढ़ भी तोड़ देता है।

हमारे समाज की विडंबना देखिए। समाज हमेशा उस व्यक्ति को उपदेश देने दौड़ता है जो पहले से ही लहूलुहान पड़ा है। जो बार-बार छल करता है, समाज उसे "मनुष्य तो गलतियों का पुतला है" कहकर सहजता से क्षमा कर देता है; लेकिन जो उस छल की आग में जल रहा है, उससे अपेक्षा की जाती है कि वह देवत्व का प्रदर्शन करे!

<u>चारों तरफ से मुफ़्त की सलाहों की बारिश होने लगती है:</u>

> "अरे, अब वह सुधर तो रहा है, थोड़ा सब्र रखो।"
> "परिवार की खातिर इंसान को कड़वे घूंट पीने ही पड़ते हैं।"
> "अगर तुम ही बात नहीं भूलोगे, तो गृहस्थी कैसे चलेगी?"

यह समाज की वह सड़ी-गली, पाखंडी मानसिकता है जो एक जीवित इंसान के मानसिक संहार पर एक खोखले 'रिश्ते' के कंकाल को तरजीह देती है। समाज को इससे कोई सरोकार नहीं कि रात के तीन बजे जब पूरा संसार सो रहा होता है, तब वह पीड़ित व्यक्ति अपने तकिए में मुंह दबाकर किस असहनीय पीड़ा से छटपटाता है। समाज को केवल इस बात से मतलब है कि बाहर से ताला लगा रहे और घर की बदबू सड़क तक न पहुंचे।

'त्याग' और 'समझौते' को संस्कारों की चाशनी में लपेटकर परोसा जाता है। परंतु सच तो यह है कि जिस समझौते में आपकी गरिमा, आपका स्वाभिमान और आपका मानसिक स्वास्थ्य पूरी तरह भस्म हो जाए, वह समझौता नहीं, वह आत्महत्या की किश्तों पर किया गया हस्ताक्षर है।

एक ऐसे व्यक्ति के साथ हर दिन, हर शाम, हर रात बिताना, जिसने आपके साथ बार-बार दगा किया हो, एक ऐसी विकराल समस्या है जिसका कोई कानूनी निदान भी सरलता से नहीं मिलता।

यह कोई ऐसी बीमारी नहीं जिसकी रिपोर्ट पैथोलॉजी लैब में निकल आए और डॉक्टर दवा लिखकर छुट्टी दे दे। यह अंदरूनी क्षरण है। आप दर्पण में देखते हैं, तो आपको अपना ही चेहरा पराया लगने लगता है। आपको याद ही नहीं रहता कि आप कभी बेफिक्र होकर हंसे थे, आपको याद नहीं रहता कि निष्कपट भाव से किसी पर भरोसा करना कैसा महसूस कराता था।

छल करने वाले की यह तथाकथित "सुधरने की कोशिश" आपके घावों पर नमक छिड़कने जैसी है। जब वह बहुत अधिक आज्ञाकारी और सीधा बनने का नाटक करता है, तो ऐसा लगता है जैसे कोई जल्लाद फांसी का फंदा पहनाने के बाद बहुत नफासत से आपकी गर्दन की मालिश कर रहा हो। उस सुधार में प्रेम का स्पंदन नहीं होता, उसमें केवल पकड़े जाने का डर और अपने अपराधबोध को कम करने की स्वार्थी भूख होती है। वह इसलिए नहीं सुधर रहा कि उसे आपसे प्रेम है; वह इसलिए सुधरने का नाटक कर रहा है ताकि वह अपनी ही नजरों में खुद को राक्षस महसूस न करे और दुनिया के सामने अपनी साख बचा सके।

और आप? आप उस नाटक के मूक दर्शक, अनिच्छुक पात्र और मुख्य बलि का बकरा बनकर रह जाते हैं।

पाखंड का अंत और मुक्ति की पुकार

कब तक? यह सवाल हर उस सवेरे मन में गूंजता है जब आँखें खुलती हैं और वही चेहरा सामने आता है। कब तक कोई इंसान अपने ही कफ़न पर सुनहरे धागों की कढ़ाई देखता रहेगा?

यह आलेख केवल एक पीड़ा का क्रंदन नहीं है, यह उस झूठे और सड़ चुके व्यवस्था-तंत्र के चेहरे पर एक जोरदार तमाचा है जो पीड़ित को ही अपराधी साबित करने पर तुला रहता है। यह स्वीकार करना अत्यंत आवश्यक है कि:

* हर टूटी चीज़ जोड़ी नहीं जा सकती: कुछ शीशे जब चकनाचूर होते हैं, तो उन्हें जोड़ने की जिद केवल हाथ लहूलुहान करती है; उसमें चेहरा कभी दोबारा साफ नहीं दिखता।

तो मेरे अनुसारअपनी गरिमा की राख से दोबारा उठना ही इस विकराल समस्या का अंतिम समाधान है।

यह मेरी ही मौलिक एवम अप्रकाशित कृति है।

- स्मिता ठाकुर

लेखक परिचय

नाम – स्मिता ठाकुर
विद्यालय अध्यापिका
उच्च माध्यमिक विद्यालय कर्णपुर, सुपौल,बिहार

अन्तरा शब्दशक्ति
प्रकाशन

पं.क्र. (04/21/05/207665/19)
अन्तरा शब्दशक्ति
www.antrashabdshakti.com
प्रकाशन एवं बहुद्देशीय संस्था

कलम की शक्ति, समाज की दिशा

सम्मान-पत्र

यह प्रमाणित किया जाता है कि

आ................**स्मिता ठाकुर**.................जी

ने हिन्दी पखवाड़े के अवसर पर आयोजित "**एक लेख प्रतियोगिता**" में उत्साहपूर्वक सहभागिता करते हुए **समसामयिक विषय पर अपने विचारों को** प्रभावी एवं सार्थक ढंग से अभिव्यक्त किया।

उनकी साहित्यिक **अभिव्यक्ति** एवं रचनात्मक सहभागिता की सराहना करते हुए **अन्तरा शब्दशक्ति प्रकाशन** की ओर से यह **सम्मान-पत्र** सादर प्रदान किया जाता है।

आपकी सृजनशीलता एवं साहित्यिक यात्रा के उज्ज्वल भविष्य की हार्दिक शुभकामनाएँ।

हिन्दी विचारों को विस्तार देती है... समाज को जोड़ती है...

हिंदी
हमारी पहचान...
हमारी शक्ति...

प्रीति सुराना
समकित सुराना

अन्तरा शब्दशक्ति प्रकाशन एवं संस्था
डॉ. प्रीति समकित सुराना

शब्द से संवेदन तक... लेखन से परिवर्तन तक...